29 FRIDAY

'नागार्जुन जन-कवि हैं'

प्रगतिवादी कविता के शीर्ष स्तम्भ नागार्जुन की काव्य-चेतना का सबसे सबल पक्ष सामान्य जनजीवन के साथ उनकी सक्रिय हमदर्दी है। उन्होंने जनजीवन के संघर्ष को वाणी दी है। कबीर व 'निराला' की परम्परा को आगे बढ़ाते हुए नागार्जुन ने भी शोषक और अत्याचारी पर चोट की है, फिर वह चाहे किसी वर्ग का क्यों न हो। इस दृष्टि से नागार्जुन सच्चे अर्थों में स्वाधीन भारत के प्रतिनिधि जनकवि हैं। आलोचकों-समीक्षकों ने तो उन्हें जनकवि कहा ही है, स्वयं नागार्जुन ने भी जनहित में लगी अपनी जनवादी प्रतिबद्धता को स्वीकार किया है —

"जनता मुझसे पूछ रही है, क्या बतलाऊँ ?
जनकवि हूँ, मैं साफ कहूँगा क्यों हकलाऊँ।"

जन-चेतना के मूल प्रतिपाद्य :-

नागार्जुन ने अपनी रचनाओं में आज के आदमी की दम तोड़ती जिन्दगी की तकलीफों और संघर्षों को पूरी संवेदना के साथ उपस्थित किया है। इसके साथ ही उसमें अन्याय, दमन और शोषण से उपजी कटुता भी व्यक्त हुई है। वे समाज के अन्तर्विरोध को समझते हैं, इस अन्तर्विरोध से जुड़े हुए अत्याचार और उत्पीड़न को अनुभव करते हैं, उसके लिए जिम्मेदार लोगों से तीव्र घृणा करते हैं और इस स्थिति को बदलकर न्याय और समता पर आधारित समाज की रचना करने वाली श्रमिक जनता से नाता जोड़ते हैं। सर्वहारा वर्ग के दृष्टिकोण, भावनाओं, उनकी छोटी-छोटी आवश्यकताओं तथा सुकोमल भावनाओं को नागार्जुन भली-भांति समझते हैं, यथा :

NOTES

याद आता मुझे अपना वह तरुआनी ग्राम
याद आतीं लीचियाँ वे आम
याद आते मुझे मिथिला के रुचिर भू-भाग
याद आते धान

बीड़ी पियेंगे
आम चूसेंगे
या कि मलेंगे देह में साबुन की सुगन्धित टिकिया
लगायेंगे सर में चमेली का तेल
या हम- उस छोकरी को टिकुली ला देंगे

ऐसी ही कविताओं के आधार पर डॉ॰ परमानन्द श्रीवास्तव अपना अभिमत देते हैं कि "जनता के पक्ष में कवितायें लिखने वाले और भी हैं पर जनता को अपने में आत्मसात् कर कविता लिखने वाले नागार्जुन अपने ढंग के अकेले कवि हैं। जनता के जीवन में हर दिन-हर क्षण घटने वाला यथार्थ नागार्जुन की कविता का यथार्थ है।"

नागार्जुन प्रगतिशील कविता के आदर्श हैं और अपने जातीय समकालीनों में ~~सबसे~~ विशिष्ट भी। उनकी प्रगतिशीलता वैचारिक मतवाद या सम्प्रदायवाद का स्वरूप ग्रहण नहीं करती है। उसमें सहज का गौरव और सामान्य का संघर्ष साफ-साफ दिखाई पड़ता है क्योंकि वे जानते हैं कि —

क्या है दक्षिण, क्या है वाम,
जनता को रोटी से काम।

काव्य-नायक :- सर्वहारा वर्ग :— नागार्जुन की कविताओं में हथियारबंद क्रांतिकारी कभी नायक नहीं रहा। वे जब-जब क्रांति का चित्र खींचते हैं, हमेशा उसमें जनता की भूमिका को सर्वोच्च प्राथमिकता देते हैं। उनकी कविता 'लो देखो अपना चमत्कार' इसका प्रमाण है —

'गोबर, मह्गू, बलचनमा और चतुरी चमार
सब छीन ले रहे स्वाधिकार
आगे बढ़कर सब जूझ रहे

1 JUN
MONDAY

रहनुमा बन गये लाखों के
अपना विशंकुपन छोड़ इन्हीं का साथ दे
रहा मध्यवर्ग

पूँजीपतियों के प्रति घृणा :-

नागार्जुन एक तरफ पाठक समुदाय से जनसाधारण से सीधा, विश्वास का रिश्ता जोड़ लेते हैं और दूसरी तरफ यह ध्वनित कर देते हैं कि उनकी घृणा उनके अनुभवों का निचोड़ है। अपने अनुभव के बल पर नागार्जुन इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि देश की दरिद्रता का उपचार करने की जगह इस कोढ़ पर मणिमय आभूषण का शृंगार करने वाला समाज अमानवीय है। इस अमानवीयता से उन्हें घोर वैमनस्य है। उनका यह रोष उनकी कविता में सर्वत्र व्याप्त है। कहीं-कहीं व्यंग्य में ढलकर व्यक्त हुआ है, कहीं चुनौती, ललकार और घृणा के स्वर में प्रकट ~~करता~~ हुआ है —

बताऊँ ?
कैसे लगते हैं —
दरिद्र देश के धनिक ? कोढ़ी कुढ़ब तन पर
मणिमय आभूषण

व्यक्तिगत परिस्थितियां :-

ध्यातव्य है कि नागार्जुन की इस प्रखर जनवादी चेतना के पीछे उनका व्यक्तित्व व उनकी अपनी परिस्थितियों का विशेष योगदान रहा है। वास्तव में यदि नागार्जुन दलित-शोषित, गरीब जन के सच्चे हितैषी हैं तो इसलिए भी कि बचपन से ही नागार्जुन वे भयानक दैन्य दारिद्र्य का साक्षात्कार करते रहे हैं। उन्होंने अपने आस-पास शोषण और अत्याचार को न केवल निकट से देखा है, अपितु स्वयं उसका अभिशाप भी भोगा है, अभाव और गरीबी देखी है। निम्नलिखित पंक्तियां उन इस परिस्थिति का सुष्ठु उदाहरण है —

लेखनी ही है हमारा फार
धरा है पट, सिन्धु है मसिपात

रामराज में अबकी रावण नंगा होकर नाचा है
सूरत शक्ल वही है भैया बदला केवल ढाँचा है।

तुच्छ से अति तुच्छ जन की जीवनी
हम लिखा करते,— कहानी, काव्य, रूपक गीत
क्योंकि हमको स्वयं भी तो तुच्छता का भेद है
कि हम पर सीधी पड़ी है गरीबी की मार। (सालकर)

जन-क्रांति का मूल अभीष्ट :-

'प्रतिहिंसा को ही स्थायीभाव' मानने वाले नागार्जुन समाज-परिवर्तन के हिमायती हैं। वे मानते हैं कि मजदूर-किसान ही पूँजीवाद का ढांचा चूर-चूर करके परिवर्तन लायेंगे। वे एक ऐसे समाज की कामना करते हैं जिसमें—

सेठों और जमींदारों को नहीं मिलेगा एक छदाम
खेत-मजूरों और किसानों में जमीन बंट जायेगी
नहीं किसी कमकर के सिर पर बेकारी मंडरायेगी।

नागार्जुन की काव्य-चेतना का स्वरूप यथार्थवादी है, वह भावुकता से कोसों दूर है। अयथार्थवादी भावुकता के बूते पर नागार्जुन जैसा समर्थ व्यंग्य लिखना असम्भव है। डॉ॰ विश्वनाथ प्रसाद तिवारी के अनुसार - "नागार्जुन अपनी कविताओं में उस अभिजात मानसिकता का विरोध करते हैं जो मामूली आदमी की उपेक्षा करती है। इसी अर्थ में वे कवि की पक्षधरता के समर्थक हैं।"

जनभाषा का प्रयोग :-

नागार्जुन जनप्रयुक्त भाषा के सबसे बड़े प्रयोगशील कवि हैं, अर्थात् उनकी कविताओं में ठेठ हिन्दी का ठाठ है और उनकी बुनावट में इस शब्दावली के वैसे ही विन्यास हैं, जैसे कबीर में मिलते हैं। चूँकि जनता में अभिजन वर्ग से घृणा है, वह मूल घृणा है, अतः जनता के कथन में व्यंग्य और मुहावरादानी बहुत होती है —

NOTES

कई दिनों तक चूल्हा रोया चक्की रही उदास
कई दिनों तक कानी कुतिया सोई उनके पास
दाने आये घर के अन्दर कई दिनों के बाद
धुंआ उठा आंगन के ऊपर कई दिनों के बाद।

स्त्री-स्वातंत्र्य की पुकार:- सर्वहारा वर्ग के साथ ही साथ नागार्जुन का ध्यान शोषित, प्रताड़ित व कुण्ठित स्त्रियों की ओर भी गया है। वे स्त्री-स्वातंत्र्य के पक्षधर हैं। इस दृष्टि से उनकी 'तालाब की मछलियाँ' शीर्षक कविता अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है, जिसमें वे युगों से पीड़ित व शोषित नारी की मुक्ति की कामना करते हैं —

आज या कि कल
तुम भी तो निकलोगी बाहर
हवेलियों से, ड्योढ़ियों से
फिर जनपद के खण्डनरक से गिरओगी
शब्दकोश को छोड़ कहीं भी
नहीं 'असूर्यम्पश्या' का अस्तित्व रहेगा

निष्कर्ष:-

इस दुनिया में जो भी पीड़ित और प्रताड़ित हैं, दुःख दर्द से आक्रान्त हैं, आतंकित और शोषित हैं, नागार्जुन के कवि ने उसका पक्षधर होने का निर्णय लिया है तथा अपनी कविताओं में उन्होंने इस निर्णय का विधिवत निर्वाह किया है। जनकवि वह होता है जो आम जनता की आशा-निराशा, विजय-पराजय, सुख-दुःख आदि में पूर्णरूपेण सहभागी होता है, इस अर्थ में नागार्जुन हिन्दी के अकेले जनकवि हैं। डा॰ रामविलास शर्मा का अग्रलिखित कथन नागार्जुन की जनचेतना को उजागर करता है — "इस बात में तनिक भी अतिशयोक्ति नहीं है कि तुलसीदास के बाद नागार्जुन अकेले ऐसे कवि हैं, जिनकी कविता की पहुँच किसानों की चौपाल से लेकर काव्य-रसिकों की गोष्ठी तक है।"

NOTES